वेदान्त में जीव एवं ब्रह्म

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

भारतीय संस्कृति में लिखित प्रमाण के रूप में सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद हैं। वेद चार हैं– ऋग् वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। वेद अपौरुषेय हैं। वेदान्त का तात्पर्य है वेदों का अन्तिम भाग। वेदों के अन्तिम भाग उपनिषद् हैं। उपनिषद् वेदान्त हैं। मुख्य रूप से एक से आठ उपनिषदें हैं। उपनिषदों में वेदों के दार्शनिक पक्ष की व्याख्या है। उपनिषदों में जीव जगत, आत्मा, ब्रह्म, कर्म और आचरण का विस्तृत विवरण है। उपनिषदें समाज और राष्ट्र को एक दिशा देती है। उपनिषदों में जीव एवं ब्रह्म की एकता का वर्णन है।

जीव अज्ञान से आवृत्त होने के कारण जीव कहलाता है। ब्रह्म या आत्मा अज्ञान को अपने वश में कर लेता है, इसलिए आत्मा के ऊपर अज्ञान का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जीव अज्ञान के वशीभूत होकर मैं और मेरेपन की भावना से ग्रस्त हो जाता है। दर्शन शास्त्र में आत्मा, परमात्मा, ईश्वर, जीव और जगत का चिंतन होता है। आत्मा और परमात्मा दोनों का स्वरूप भिन्न–भिन्न है। आत्मा बंधन के कारण जीव कहलाती है। जब आत्मा कर्मरज से मुक्त होता है तो वह परमात्मा बन जाता है। परमात्मा अशरीरी है। जन्म मरण के चक्र से परमात्मा मुक्त होता है। आत्मा कर्म बंधन में बंधा होने के कारण संसारी कहलाता है। सभी आस्तिक दर्शन किसी न किसी रूप में ईश्वर, आत्मा एवं परमात्मा के अस्तित्त्व में विश्वास करते हैं, क्योंकि आत्मा के अस्तित्त्व को माने बिना कर्म और पुनर्जन्म की व्याख्या ही नहीं की जा सकती। आत्मा ही एक ऐसा शाश्वत तत्त्व है जिसके आधार पर मानव अपने अस्तित्त्व को सिद्ध करता है।जीव संसार में आता है और अपने कर्मों के अनुसार सुख–दुःख का अनुभव करके अपने कर्मों को नष्ट करता है। पुराने कर्मों को भोगना और नये कर्मों का अर्जन जीव करता रहता है। इसलिए जीव को माया सताती है, किन्तु ब्रह्म माया से परे है।

विशुद्ध आत्मा ब्रह्म है। वेदान्त की भाषा में **ब्रह्म सत्यं जगत् मिथ्या** अर्थात ब्रह्म सत्य है और जगत मिथ्या है। जीव ब्रह्म को अंश है। चौरासी लाख जीव योनियां कही गई है। आत्मा के

स्तर पर जीव में कोई भेद नहीं है, किन्तु कर्मों के वशीभूत होने के कारण चेतना की अभिव्यक्ति सभी जीवों में समान नहीं है। हर जीव ब्रह्म का अंश है। जीव जब कर्मों से मुक्त होता है तो ब्रह्म बन जाता है। ब्रह्म सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त है। सम्पूर्ण जीव उसीसे नियंत्रित होते हैं।

वेदान्त में जगत की व्यवहारिक सत्ता है। पारमार्थिक स्तर पर केवल ब्रह्म ही सत्य है। जीव को जैसे ही अपने अज्ञान का ज्ञान होता है, वैसे ही वह ब्रह्म बन जाता है। बन्धन मुक्त होने पर राग, द्वेष समाप्त हो जाता है। राजा जनक विदेहराज कहलाते थे। वे जीवन मुक्त थे। उन्हें यह ज्ञान था कि प्राप्त मन, वचन और काया से किसी भी प्राणी को दुःख नहीं देना चाहिए। जीव जब ब्रह्म में लीन हो जाता है तो वह मुक्त हो जाता है। प्रशंसा, निन्दा, गर्हा सुख–दुख में सम रहना स्थित प्रज्ञ की अवस्था है। ज्ञान प्राप्त हो जाने पर जीव का ज्ञान नेत्र खुल जाता है।

मुक्त व्यक्ति संसार में कमलवत् रहता है। जैसे पानी में कमल निर्लिप्त रहता है वैसे ही जीवन मुक्त व्यक्ति की भी दशा है। आत्मा दो प्रकार की है, एक जीवात्मा दूसरी परमात्मा। परमात्मा या ईश्वर सर्वज्ञ है, और एक है। जीवात्मा प्रत्येक शरीर में भिन्न–भिन्न व्यापक और नित्य है। परमतत्त्व अंतिम तत्त्व है, सर्वाधार है, सभी वस्तुओं का मूलस्थान है। उसी को मूलतत्त्व कहा जा सकता है, जिससे इस जगत् की उत्पत्ति हुयी है, जो सभी वस्तुओं की सत्ता का आधार है और जिसमें अन्ततः इन सभी वस्तुओं का लय हो जाता है। जगत् का आदि और अन्त ईश्वर को माना गया है। अतः ईश्वर ही परमतत्त्व है। इसे ही आत्मतत्त्व भी कहते हैं। ब्रह्म के दो रूप माने गये हैं– मूर्त्त और अमूर्त्त, मर्त्य और अमृत, स्थित और चर तथा सत् और त्यत्। ब्रह्म के विषय में सविशेष श्रुतियां और निर्विशेष श्रुतियां दोनों उपलब्ध हैं। ब्रह्म को सविशेष सगुण भी कहा गया है और निर्विशेष निर्गुण भी। सगुण ब्रह्म को 'अपर' ब्रह्म और निर्गुण ब्रह्म को पर ब्रह्म कहा गया है। अपर रूप में ब्रह्म सविशेष, सगुण, सप्रपंच, सविकल्प और सोपाधिक है तथा पर रूप में ब्रह्म निर्विशेष, निर्गुण निष्प्रपञ्च, निर्विकल्पक और निरूपाधिक है। अपर ब्रह्म की संज्ञा ईश्वर भी है जो समस्त विश्व का कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता और नियन्ता है। स्वरूप लक्षण वस्तु के तात्विक स्वरूप को प्रगट करता है। सगुण ब्रह्म का स्वरूप लक्षण है– 'सत्यं

ज्ञानमनन्तं ब्रह्म' और विज्ञानमानन्दं ब्रह्म। ब्रह्मपरम सत्य है, विशुद्ध ज्ञान है, अनन्त है, अखण्ड आनन्द है। यह ब्रह्म का स्वरूप है। ब्रह्म सत् चित् आनन्द है, शान्त और शिव है।

आत्मा जिस शरीर को ग्रहण करता है, उस समय उससे संयुक्त होकर वैसा ही बन जाता है। जो जीवात्मा आज स्त्री है, वही दूसरे जन्म में पुरुष हो सकता है, जो पुरुष है, वही स्त्री हो सकता है। भाव यह है कि स्त्री, पुरुष और नपुंसक आदि भेद शरीर को लेकर हैं, जीवात्मा को लेकर नहीं। जीवात्मा सर्वभेदशून्य और सारी उपाधियों से रहित है। ईश्वर को जगत् की उत्पत्ति, स्थिति एवं प्रलय का कारण कहा गया है।